# शिक्षा के मायने?

पवन सिन्हा*

**शिक्षा है क्या? क्या महज़ विद्यालय में दाखिला लेना भर ही शिक्षा है? 'शिक्षा' और 'स्कूलिंग' में गहरा भेद है और हम इस भेद को नहीं देख पा रहे हैं। स्कूल के भीतर प्रवेश लेना भर ही शिक्षा का अधिकार नहीं है, बल्कि जीवन को बेहतर तरीके से जीना और स्वयं की आंतरिक क्षमताओं का अधिकतम विकास शिक्षा है। शिक्षा की अवधारणा का मूल बिंदु यह है कि शिक्षा हमें सुसंस्कृत होने में मदद करती है और सुसंस्कृत होने में संस्कार और समाजीकरण का विशेष महत्व है। संस्कार को धर्म विशेष के साथ जोड़कर देखने की 'भूल' या 'दुस्साहस' कदापि न करें। दरअसल बच्चे को शिक्षा के अधिकार के तहत स्कूल में दाखिला तो मिल ही जाएगा लेकिन स्कूल के भीतर 'क्या' हो रहा है या क्या होगा – यह चिंता और चिंतन का विषय है।**

यायावरी मेरा शौक भी है और शायद 'नियति' भी! देश के अलग-अलग हिस्सों में जाना और वहाँ के लोगों को जानना-समझना, उनकी दुनिया के हर पहलू को बेहद बारीकी से देखने की इस आदत ने कभी खुशी दी, तो कभी गम! ऐसे ही कई जगहों पर घूमते हुए वहाँ के स्कूलों के भीतर झाँकने के कई मौके मिले और इसके लिए मैंने उस हर व्यक्ति को मन ही मन धन्यवाद दिया जिसने मुझे इस अनुभव को संजोने का अवसर दिया। सिर्फ़ स्कूल ही नहीं बल्कि स्कूल के आस-पास का क्षेत्र भी हमेशा से मेरी जिज्ञासा का हिस्सा रहा है। आप पूछेंगे – क्यों? तो इस 'क्यों' का जवाब यह है कि शिक्षा के लिहाज़ से केवल स्कूल के भीतर का हिस्सा ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि वह हिस्सा भी महत्वपूर्ण है, जहाँ से स्कूल के बच्चे आते हैं। वह समुदाय भी महत्वपूर्ण है जिसके तौर-तरीकों का बच्चों पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इतना ही नहीं, वह हिस्सा जो स्कूल के गेट या चारदीवारी से एकदम सटा है, वह तो और भी महत्वपूर्ण है। आपका पुन: सवाल हो सकता है – 'क्यों?' तो इस 'क्यों' का जवाब आपको तब स्वत:

* *एसोसिएट प्रोफ़ेसर,* मोतीलाल नेहरू कालेज, साउथ कैंपस, दिल्ली विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली 110002

ही मिल जाएगा, जब आप स्कूल की चारदीवारी से सटे किसी बड़े से सीमेंट के बने कूड़ेदान को देखेंगे या फिर पंसारी की दुकान पर सिगरेट, तंबाकू, गुटखा या पान मसाला बिकते हुए देखेंगे। यहाँ आप अपने इस तर्क से मेरी बात को खारिज कर सकते हैं कि सरकार ने तो स्कूल के पचास-सौ मीटर के दायरे के भीतर इस तरह की किसी दुकान को लगाने पर प्रतिबंध लगाया है। मैं भी ऐसा नहीं कह रहा। लेकिन जब ऐसा होते हुए देखते हैं, तो सारे सरकारी दावे खोखले नज़र आते हैं। क्या स्कूल के हैडमास्टर साहब को इस नियम के बारे में नहीं पता होगा? और जब पता है तो वे उस दुकान को लगने कैसे देते हैं? लेकिन दुकान किसी रसूक वाले की होगी तो! जिसे हटाना बेहद 'मुश्किल' नहीं बल्कि 'जोखिम' भरा होगा! लेकिन कूड़ेदान के लिए कोई सरकारी नियम बना है? इसके बारे में कम-से-कम मुझे तो जानकारी नहीं है।

दिनभर स्वच्छता और प्रदूषण रहित वातावरण की दुहाई देने वाले शिक्षकों को कूड़े की 'बास' नहीं आती होगी, लेकिन बच्चों को तो आती होगी और वे उस घोर प्रदूषित वायु को 'सूँघने' को विवश होंगे। ऐसे में हम शारीरिक स्वास्थ्य को बनाए रखने की चर्चा कैसे कर सकते हैं? यह तो गनीमत है कि अभी सरकारी स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों ने सवाल उठाना नहीं सीखा है और न ही अधिकारों के हनन के विरुद्ध आवाज़ उठाना सीखा है। भला हो इन बच्चों का!

हम अक्सर स्कूली शिक्षा के लिए बनी नीतियों के बारे में गाहे-बगाहे चर्चा करते हैं और इतना ही नहीं उन नीतियों के क्रियान्वयन की सच्चाई को टटोलने की भी कोशिश करते हैं। इस सच्चाई को टटोलने के चक्कर में और भी बहुत सारी 'सच्चाइयों' का 'सच' भी उजागर होता है। हालाँकि सरकारी आँकड़े अनेक बार सच्चाई को उसके सही रूप में उजागर नहीं करते क्योंकि आँकड़ों का कारोबार जिस तरह से होता आया है या जिस तरह से हो रहा है, उससे शिक्षा के किसी भी पहलू की सही-सही तस्वीर का दीदार कर पाना मयस्सर नहीं है।

शिक्षा का अधिकार लागू हुए चार साल हो चुके हैं और उसके अनुसार सभी स्कूल जाने योग्य उम्र के बच्चों को स्कूल के भीतर जाने यानी स्कूल में प्रवेश का अधिकार है। उन बच्चों के लिए विशेष प्रशिक्षण केंद्र भी खोलने और उनमें गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की 'बात' लगातार होती रही है। लेकिन क्या हम विद्यालयों के भीतर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को भी सुनिश्चित कर पाए हैं? शायद नहीं। 'शायद नहीं' के बदले 'नहीं' कहना ज़्यादा सही होगा। इसलिए आज भी गली-मोहल्लों में, चौराहे पर यही बच्चे हमें अलग-अलग 'अवतारों' में नज़र आते हैं– भीख माँगते हुए, कार पर फ़टका मारते हुए, लाल-काले चेहरे बनाकर कलाबाज़ी खाते हुए, शनि बाबा के नाम पर तेल भरे पात्र के लिए पैसे माँगते हुए, फूल या किताबें आदि सामान बेचते हुए।

आपको शायद इससे अधिक 'अवतारों' का दर्शन करने का 'अवसर' मिला होगा। लेकिन मुझे यह अवसर कभी नहीं चाहिए! इन 'अवतारों' को देखकर लगता है कि आखिर किसे है शिक्षा का अधिकार? कौन उस अधिकार को 'भोग' रहा है?

दरअसल 'भोगना' शब्द में विवशता का स्वर ज़्यादा अधिक है, किसी ऐश्वर्य को भोगने का नहीं! कई राज्यों के सरकारी विद्यालय देखे और वहाँ के बच्चों से भी मुलाकात की तो यही पाया कि अभी भी बहुत कुछ ऐसा है, जिसे समझने की ज़रूरत है, जिसे संवारने की ज़रूरत है, जिसे बच्चों की नज़र से देखने की ज़रूरत है।

आइए, एक-एक करके शिक्षा के अधिकार की कुछ अनकही बातों को सुनने और अनदेखी बातों को परत-दर-परत देखने की कोशिश करें। 'शिक्षा का अधिकार' के अनुसार, 'छह से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को, प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक आस-पास के किसी विद्यालय में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।'...'किसी विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालक को किसी कक्षा में रोका नहीं जाएगा या विद्यालय से प्राथमिक शिक्षा पूरी किए जाने तक निष्कासित नहीं किया जाएगा।' संभवत: इसके पीछे सरकार की यह मंशा होगी कि सभी बच्चे प्रारंभिक शिक्षा तो पूरी करें। इस अधिकार में सब कुछ बहुत 'सुनहरा-सा' लगता है कि कम से कम कक्षा आठ तक की पढ़ाई नि:शुल्क है। और यह भी कि इस अधिकार के तहत किसी भी बच्चे को विद्यालय में प्रवेश देने से वंचित नहीं किया जा सकता।

बच्चे की उम्र के अनुसार उसे उचित कक्षा में प्रवेश दिया जाएगा। लेकिन मेरा सवाल यहीं इसी अधिकार पर ही है कि अंतत: यह शिक्षा है क्या? क्या महज़ विद्यालय में दाखिला लेना भर ही शिक्षा है? क्या आपको नहीं लगता कि सबसे पहले इस 'शिक्षा' को ही परिभाषित करने की आवश्यकता है? मेरे विचार से 'शिक्षा' और 'स्कूलिंग' (स्कूलिंग के लिए कोई और हिंदी शब्द सूझ नहीं रहा।) में गहरा भेद है और हम इस भेद को नहीं देख पा रहे हैं। बच्चे को इस अधिकार के तहत स्कूल में दाखिला तो मिल ही जाएगा, लेकिन स्कूल के भीतर 'क्या' हो रहा है या क्या होगा– यह चिंता और चिंतन का विषय है। आप और हम सभी ने शायद किसी न किसी स्कूल का अुनभव तो लिया होगा – अपने नहीं तो अपने बच्चों के स्कूल का और यदि वह भी नहीं तो अपने आस-पास के स्कूलों को भी देखा ही होगा।

स्कूल में कक्षा-कक्ष होते हैं और ये भी नहीं हैं तो कोई बरामदा होता है, कोई पेड़ होता है और उसके नीचे बच्चे बैठकर पढ़ाई करते हैं। क्या पढ़ते हैं? किताबें पढ़ते हैं और किताबों के अंत में दिए गए सवालों के जवाब देते हैं, उन्हें लिखते हैं बतौर होमवर्क! फिर कुछ समय के अंतराल पर उनकी प्राय: लिखित परीक्षा होती है कि उन्हें 'क्या आता है?' बच्चे आठवीं कक्षा तक फ़ेल नहीं हो सकते/फ़ेल नहीं किए जा सकते – इस नीति के तहत वे अगली कक्षा में पहुँच जाते हैं। यहाँ कई और सवाल उठते हैं —

- क्या किताब को समय से पूरा कर देना शिक्षा है?
- क्या किताब में दी गई जानकारी को याद कर लेना भर ही शिक्षा है?
- क्या किताब के अंत में दिए गए सवालों के ठीक-ठीक जवाब देना भर ही शिक्षा है?

- क्या किताब के आधार पर सभी को समान होमवर्क देना और उसे पूरा करना शिक्षा कही जा सकती है?
- क्या बच्चों की परीक्षा लेना शिक्षा का अंतिम उद्देश्य कहा जा सकता है?
- क्या शिक्षा को जानकारी का पर्याय कहा जा सकता है?
- क्या शिक्षा को ज्ञान का पर्याय कहा जा सकता है?
- क्या शिक्षा केवल किताबों के भीतर ही सिमटी हुई है?

इन सभी सवालों के सही-सही जवाबों को खोजना शिक्षा की मूल प्रकृति और स्वभाव को जानने के लिए बेहद ज़रूरी है। हमें यह समझ लेना चाहिए कि शिक्षा और जानकारी में अंतर है एवं शिक्षा और ज्ञान में भी अंतर है। आप याद कीजिए उस ज़माने को, जब आपके-हमारे माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी, चाचा-चाची, मौसी, बुआ आदि को स्कूल में जाने का अवसर नहीं मिला तो क्या उन्होंने अपने जीवन को बेहतर तरीके से नहीं जिया या अपने परिवार और समाज के लिए कुछ ठोस कार्य नहीं किए? मुझे तो याद नहीं पड़ता! वे भले ही स्कूल न गए हों, लेकिन जीवन जीने का सलीका उन्हें था/है। वे कम पैसों में अपनी अच्छी गुज़र-बसर करते थे।

एक किसान यह भली प्रकार से जानता है कि कौन-सी फ़सल कब और कैसे बोई जाती है। एक माली यह अच्छे से जानता है कि किस पौधे की कलम रोपी जाएगी और यह भी कि कलम बनाई कैसे जाती है, उसे तिरछा क्यों काटा जाता है, यह भी कि पौधे के लिए बीज की ज़रूरत होगी। पानी और खाद की कितनी मात्रा पर्याप्त होगी, आदि आदि। शायद माली ने यह किसी स्कूल में तो नहीं सीखा होगा और न ही कोई विशेष कोर्स किया होगा। अपने बड़े-बुज़ुर्गों के साथ काम करते-करते और उन्हें काम करते हुए देखने से अनेक बातें समझ आ गई होंगी। जहाँ कुछ समझ नहीं आया होगा, वहाँ पूछ लिया होगा। आपसी संवाद बातों को जानने-समझने का एक अच्छा ज़रिया पहले भी था और आज भी है।

शिक्षा को यदि 'बेहतर जीवन जीने की तैयारी' के रूप में देखा जाए या फ़िर शिक्षा को 'बेहतर तरीके से जीवन जीना' के रूप में देखा जाए तो यह बात और भी स्पष्ट होगी कि शिक्षा और स्कूलिंग में बहुत गहरा अंतर है। स्कूल के भीतर प्रवेश लेना भर ही शिक्षा का अधिकार नहीं है, बल्कि जीवन को बेहतर तरीके से जीना और स्वयं की आंतरिक क्षमताओं का अधिकतम विकास शिक्षा है।

शिक्षा की अवधारणा में मूल बिंदु यह है कि शिक्षा हमें सुसंस्कृत होने में मदद करती है और सुसंस्कृत होने में संस्कार और समाजीकरण का विशेष महत्व है। संस्कार को धर्म विशेष के साथ जोड़कर देखने की 'भूल' या 'दुस्साहस' कदापि न करें। दरअसल हमें अलग-अलग रंग के लेंस से दुनिया को और दुनिया की हर चीज़ को देखने की 'खराब' आदत पड़ गई है। किसी लेंस विशेष से देखने की यह संकीर्णता स्वयं के लिए और साथ ही समाज के लिए भी बेहद घातक है। वास्तविक शिक्षा हमें इसी 'लेंसवादी दृष्टिकोण' से बचाती है और हमारे मस्तिष्क के कपाटों को खोलकर उन्हें चिंतन के लिए उन्मुक्त आकाश

देती है। सोचने-समझने का विस्तृत दायरा शिक्षा की देन है। जटिल से जटिल परिस्थितियों का पूर्ण आत्मविश्वास और साहस से सामना करना, किसी भी घटना के प्रति सोच-समझकर प्रतिक्रिया करना और दूसरों के दृष्टिकोण को समझने का ईमानदारी भरा प्रयास भी शिक्षा की ही देन है। दूसरों की जगह स्वयं को रखकर देखने की काबलियत शिक्षा है। मेरे लिए शिक्षा व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के हित से परे जा ही नहीं सकती। लेकिन क्या स्कूलों में दी जाने वाली तथाकथित शिक्षा हमारे बच्चों को वह साहस दे पा रही है? क्या वह बच्चों में विश्लेषण करने की क्षमता का विकास कर पा रही है? क्या वह यह निर्णय लेने में मदद कर पा रही है कि क्या सही है और क्या गलत? क्या वह दूसरों की पीड़ा को समझने और उस पीड़ा को हर संभव प्रयास द्वारा दूर करने की भावना और सफ़ल प्रयास को बढ़ावा दे पा रही है? नहीं! अगर स्कूल के भीतर दी जाने वाली शिक्षा इनमें से कुछ भी करने की योग्यता दे पाती तो संभवत: देश की राजधानी के पॉश इलाके के एक स्कूल में के.जी. में पढ़ने वाली पाँच साल की बच्ची के साथ वह न 'घटा' होता जो शर्मसार तरीके से 'घटा'। (यह घटना संभवत: 14 अगस्त 2014 के आस-पास एक समाचार पत्र में प्रकाशित हुई थी।) उसी स्कूल के बारहवीं कक्षा के एक लड़के के द्वारा उस मासूम बच्ची के साथ कक्षा में ही यौनाचार किया गया। आप लगाते रहिए कानूनों की अनगिनत धाराएँ, लेकिन इनमें से कोई भी कानून, कोई भी धारा क्या उस बच्ची के तन-मन पर लगे घाव को भर पाएगी? क्या वह उस बच्ची को ज़िंदगी भर के लिए इस सदमे से बाहर निकाल पाएगी? इनमें से भी सबसे अहम सवाल कि क्या बच्ची और उसके माता-पिता के लिए स्कूल और स्कूल में दी जाने वाली शिक्षा का कोई महत्व रह पाएगा? क्या वह बच्ची कभी स्कूल भी जा पाएगी? देती रहे सरकार नि:शुल्क शिक्षा और नि:शुल्क सुविधाएँ! जिस किशोर लड़के ने यह सब कांड किया उसे स्कूल में कौन-सी शिक्षा मिली या मिल रही है? लगभग बारह साल स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद अगर यह हाल है, तो तौबा है ऐसी शिक्षा से। स्कूल और शिक्षा नीतियाँ क्या कहेंगी इस दरिंदगी पर? है कोई जवाब? क्या हुआ हमारी तथाकथित शिक्षा का? दोष सिर्फ़ उस छात्र का है जिसने यह सब किया या फ़िर इसके दोषियों की सूची में आप और भी नामों को शामिल करना चाहेंगे या शामिल भी कर पाएँगे? जीवन से बढ़कर न तो कुछ है और न ही होगा। ऐसी स्कूली शिक्षा का क्या करेंगे जब जीवन ही दांव पर लग जाए! जीवन है तो शिक्षा है! स्कूल भले ही बच्चे को 'निष्कासित' न करे, लेकिन जो कुछ स्कूलों में घट रहा है, वह बच्चों को उनके बचपन और जीवन से 'निष्कासित' करने में किसी प्रकार की कोताही न बरतेगा! क्या लाभ शिक्षा के अधिकार का?

हमारे आस-पास ऐसी अनेक घटनाएँ घटती ही रहती हैं जब यह सुनने में आता है कि शिक्षक बच्चों को शारीरिक रूप से दंडित करते हैं। हालाँकि, शारीरिक दंड पर प्रतिबंध है, तो होता रहे, हम तो वही करेंगे जो बच्चों के हित में है। बच्चों का हित किसमें है? उनका हित इसमें है कि वे खूब पढ़ें-लिखें, अच्छे अंक लाएँ, कक्षा के सभी बच्चे 'अव्वल' आएँ,

इसके लिए बच्चों को यदि दंडित कर भी दिया जाए तो क्या हर्ज़ है? हम भी तो 'ठुककर' ही सीधे हुए हैं।' ऐसे-ऐसे कुतर्क सुनने के बाद क्या बचता है हमारे पास, हमारे स्कूलों के पास? कुछ भी तो नहीं। शिक्षा के नाम पर सब 'रीता ही रीता' है।

शिक्षा का अधिकार में यह स्पष्टत: कहा गया है कि किसी बालक को शारीरिक दंड नहीं दिया जाएगा या उसका मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जाएगा। लेकिन आपको लगता है कि विद्यालयों में ऐसा नहीं होता होगा। इतना तो तय है कि दंड सिर्फ़ शारीरिक ही नहीं होता, मानसिक भी होता है। क्या आपने कभी गौर किया है कि सरकारी स्कूल में कौन-से बच्चे पढ़ने आते हैं? हालाँकि, सरकारी स्कूल की भी अनेक श्रेणियाँ हैं — नगर निगम के स्कूल, शिक्षा निदेशालय के स्कूल, केंद्रीय विद्यालय आदि। इनमें से सभी की अपनी एक खास 'नियति' है। खैर, हम बात कर रहे थे कि स्कूलों में अक्सर बच्चों के साथ, उनके माता-पिता, भाई-बहनों के साथ जिस तरह का निचले दर्जे का व्यवहार होता है, वह किसी यंत्रणा, प्रताड़ना या दंड से कम नहीं है।

अक्सर शिक्षकों द्वारा बच्चों को 'तू', 'ऐरी/ऐरे' कहकर संबोधित किया जाता है। अक्सर बच्चों को 'तेरा बाप'/'तेरी माँ' यह भी सुनने को मिलता है– हीनता के भाव से भरा यह व्यवहार बच्चों को भीतर तक कचोट जाता है। आखिर उनका, उनके माता-पिता का भी तो सम्मान है। यह 'सबक' कब 'पढ़ाया' जाएगा? कौन पढ़ाएगा? किसे पढ़ाया जाएगा? सवाल अभी और भी हैं!

शिक्षा का अधिकार में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की भी बात की गई है। अभी तक तो हम शिक्षा को ही नहीं समझ पाए, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बात और उसकी प्राप्ति बहुत दूर है। सवाल यह भी है कि 'गुणवत्ता' का पैमाना क्या है? क्या वह पैमाना हिंदुस्तानी है या विदेशी? आप कहीं बाहर घूमने गए और वहाँ के बेहद खूबसूरत फूलों के पौधे लाने से क्या होगा? क्या पौधा पनप पाएगा? नहीं, बिलकुल नहीं! क्यों? क्योंकि उस पौधे को वही आबोहवा चाहिए, मिट्टी चाहिए, वह तो है नहीं। लिहाज़ा, पौधा मुरझा जाएगा और एक दिन उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। यही हाल होता है हमारे बच्चों का भी। हिंदुस्तान की मिट्टी में पले-बढ़े बच्चों को विदेशी 'खाद, पानी' से सिंचित किया जाएगा तो वे पनपने वाले नहीं हैं। हम जिस शिक्षा की बात कर रहे हैं, उसका फ़लसफ़ा जीवन के फ़लसफ़े से कितनी 'दूरी' पर है? पहले इन सवालों के जवाब मिल जाएँ तो आगे की राह लें! फ़िलहाल तो इतना ही ...!